न्यायालय अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, कोर्ट संख्या–18, लखनऊ।

पीठासीन अधिकारी– श्री प्रशान्त बिलगैयाँ, उच्चतर न्यायिक सेवा – UP01623

<u>प्रकीर्ण वाद संख्या–285 सी / 2009</u>

1. चन्द्रशेखर सिंह पुत्र उग्रसेन सिंह, निवासी 1/7, शिवस्थली–1,फैजाबाद रोड, लखनऊ।

----आपत्तिकर्ता / निर्णीतऋणी

सन्दर्भ

बनाम

निष्पादन वाद सं0– 37 / 2007

1. कल्पना कपूर बनाम उग्रसेन सिंह आदि

<u>आदेश</u>

पत्रावली पेश हुई। धारा 47 सी0पी0सी0 की आपत्ति पर उभयपक्ष के विद्वान अधिवक्तागण को सुना जा चुका है। पत्रावली आज आदेश हेतु नियत है।

निर्णीत–ऋणी की ओर से धारा 47 सी0पी0सी0 की आपत्ति प्रस्तुत करते हुए यह कहा गया है कि निष्पादन वाद अन्तर्गत आदेश 21 नियम 11 सी0पी0सी0 दिनांक 17.04.2017 को दाखिल करते समय कालम नं0 4 में यह सही तरीके से नहीं भरा गया कि निष्पादन प्रार्थनापत्र केस नं0 37/2007 इस आधार पर संधार्य नहीं है एवं सही तथ्य न्यायालय के समख डिक्रीदार द्वारा प्रस्तुत नहीं किया गया है। संलग्नक–1 इस आपत्ति के साथ दाखिल किया गया है। निणर्भ्त ऋणी द्वारा यह भी कहा गया है कि आर्बीट्रेशन केस नं0 83–ई/2003 के विरूद्व निर्णीत ऋणी द्वारा एक अपील विद्वान को–आपरेटिव सोसायटी ट्रिबुनल यू0पी0, लखनऊ में प्रस्तुत हुई, जो अपील सं0–56/06 चन्द्र शेखर सिंह बनाम श्याम लाल कपूर आदि के रूप में पंजीकृत हुई और उक्त अपील दिनांक 31.01.2007 को निर्णीत हुई, जिसके विरूद्व निर्णीतऋणी द्वारा एक पुनर्विचार याचिका विद्वान अधिकरण के समक्ष प्रस्तुत की गयी, जो पुनर्विचार याचिका संख्या 02/2007 , अपील सं0 56/04 चन्द्रशेखर सिंह बनाम श्यामलाल कपूर से सम्बन्धित पंजीकृत की गयी, जो दिनांक 19.07.2009 को विद्वान को–आपरेटिव सोसायटी ट्रिबुनल यू0पी0, लखनऊ के समक्ष बहस हेतु नियत थी। संलग्नक सं0 2 पुनर्विचार याचिका के सम्बन्ध में दाखिल किया गया है। निर्णीतऋणी द्वारा

प्रस्तुत केस में यह अभिकथन किया गया है कि डिक्रीदार स्वच्छ हाथों से न्यायालय के समक्ष नहीं आया है। कालम नं0–4 निष्पादन वाद को सही तरीके से नहीं भरा गया, जिसके लिये उसे धारा 340 दं0प्र0सं0 के अन्तर्गत दण्डित किया जाना चाहिये, क्योंकि उसके समर्थन में डिक्रीदार ने एक शपथ पत्र, प्रार्थना पत्र अन्तर्गत आदेश 21 नियम 11 सी0पी0सी0 के समर्थन में दाखिल किया गया है, जो असत्य है। डिक्रीदार द्वारा अपने आवन्टन को चुनौती नहीं दी गयी है। यद्यपि पैरा 4 व 5 वाद पत्र से यह स्पष्ट है कि आवन्टन को निरस्त किये जाने की सूचना उसे विधिवत थी। बिना आवन्टन निरस्त कराये डिक्रीदार को इस आर्बीट्रेशन केस में कोई अनुतोष प्रदान नहीं किया जा सकता। आवन्टन के निरस्तीकरण को कोई चुनौती भी नहीं दी गयी, इसलिये वह अन्तिम हो गया और डिक्रदार का प्लाट नं0–7 पर कोई स्वत्व नहीं रह गया, इसलिये प्लाट नं0–7 के सम्बन्ध में कोई अनुतोष उसे प्रदान भी नहीं किया जा सकता। डिक्रीदार को निर्णीत–ऋणी के पक्ष में निष्पादित विक्रय पत्र को चुनौती देने का कोई अधिकार नहीं है। प्लाट नं0–7 का डिक्रीदार के पक्ष में दिनांक 27.01.1980 के प्रस्ताव से आवन्टन नियम 98 यू0पी0 को–आपरेटिव सोसायटी रूल्स,1968 के विरूद्व है और शून्य है। आर्बीट्रेशन वाद निरस्त किया जाना चाहिये था। विशिष्ट संविदा का अनुतोष एक विवेकाधीन अनुतोष है और इस विवेकाधीन शक्ति का प्रयोग करते समय न्यायालय को डिक्रीदार द्वारा कारित की गयी कमियों को देखा जा सकता है तथा यह भी देखा जा सकता है कि उसके द्वारा विपक्षी पक्ष को नुकसान पहुॅचाया गया है। डिक्रीदार द्वारा 23 वर्ष तक कोई कार्यवाही नहीं की गयी, जिससे यह उपधारणा की जा सकती है कि उसने अपने अधिकारों का परित्याग कर दिया है। प्लाट नं0 7 के सम्बन्ध में यदि कोई अधिकार का सृजन डिक्रीदार के पक्ष में हुआ हो तो वह भी परित्यक्त माना जायेगा। न्यायालय को यह अधिकार है कि वह संविदा के विशिष्ट नुपालन के आदेश को अमान्य कर सकता है तथा डिक्रीदार को आर्थिक प्रतिपूर्ति की जा सकती है। 23 वर्ष की देरी डिक्रीदार को अनुतोष नहीं प्रदान कर सकती है। निर्णीत ऋणी ने अपना मकान बना लिया है और वह वर्ष 1997–1998 से उसमें निवास कर रहा है और यदि ऐसी स्थिति में विशिष्ट अनुतोष डिक्रीदार को प्रदान किया जाता है, तो निर्णीतऋणी को अपूर्णनीय क्षति होगी। विगत 20 वर्षों में सम्पत्ति का मूल्य भी कई गुना बढ़ चुका है,इसलिये भी डिक्रीदार को कोई अनुतोष नहीं प्रदान किया जा सकता है। मकान का निर्माण

और ध्वस्तीकरण सोसायटी का कार्य नहीं है। आर्बीट्रेटर द्वारा ध्वस्तीकरण का अनुतोष अविधिक रूप से दिया गया है। आर्बीट्रेशन केस संधार्य नहीं है। अधिनियम की धारा 70 आकर्षित करने के लिये दो शर्तें आवश्यक हैं। प्रथम, सोसायटी के संविधान या व्यापार से सम्बन्धित विवाद हो। द्वितीय क्लाज(ए)(बी) उपधारा(1) धारा 70 में इन्टर–सी पार्टी। यदि उपरोक्त दोनों शर्तों में से किसी शर्त का पालन नहीं किया जाता, तो आर्बीट्रेटर द्वारा पारित किया गया एवार्ड शून्य होगा, और किसी भी स्तर पर आपत्ति उठायी जा सकती है। आर्बीट्रेशन केस संधार्य ही नहीं था। विक्रय पत्र के निरस्तीकरण का क्षेत्राधिकार धारा 70 को–आपरेटिव सोसायटी एक्अ के अन्तर्गत आता ही नहीं है। को–आपरेटिव सोसायटी के उपनियम में 21 वर्ष के आयु का दिया जाना धारा 17 (1) (ए) उक्त अधिनियम के विरूद्व है। अमरावती सहकारी गृह निर्माण समिति लि0, लखनऊ प्राइमरी को–आपरेटिव हाउसिंग सोसायटी, जो यू0पी0 को–आपरेटिव सोसायटीज एक्ट 1965 व 1968 के अन्तर्गत पंजीकृत संस्था है। निण्ग्रीत ऋणी प्लाट नं0–7 का एक सदस्य है, जिसकी माप 3029 वर्गफिट शिवस्थली स्कीम,फैजाबाद रोड,लखनऊ में है। प्लाट नं0–7 पहले श्याम लाल कपूर डिक्रीदार को प्रस्ताव सं0 4 दिनांक 27.01.1980 से आवन्टित हुआ था। पंजीकृत नोटिस दिनांकित 14.10.1988 द्वारा श्री श्याम लाल कपूर प्रत्यर्थी सं0 1 ⁄डिक्रीदार को कुछ औपचारिकतायें भी पूर्ण करनी थी तथा विकास चार्ज के रूप में रू 61,100⁄– भी जमा करना था। यह शर्त विक्रय पत्र निष्पादित करने के पूर्व पूरी करनी थी। नोटिस दिनांक 14.10.88 संलग्नक–3 के रूप में दाखिल किया गया है। श्यामलाल कपूर –डिक्रीदार ने दिनांक 14.10.88 की नोटिस का कोई जवाब नहीं दिया, क्योंकि उसमें स्पष्ट लिखा था कि यदि कोई शर्त जो क्र0सं0––1 से 9 में उल्लिखित है, पूरी नहीं होती है,तो औपबन्धिक रूप से नियमित हो जाने के बावजूद समिति आबन्टन को निरस्त करने का अधिकार रखती है। एडमिनिस्ट्रेटर के निर्णय के पश्चात ही नोटिस जारी की गयी थी। नोटिस की शर्त सं0 3 थी कि रू0 61,100⁄–दो किश्तों में जमा करना होगा। प्रथम किश्त 75 प्रतिशत तथा दूसरी किश्त 25 प्रतिशत थी, किन्तु श्यामलाल कपूर–डिक्रीदार द्वारा कोई शर्त पूरी नहीं की गयी। श्री बी0बी0 सती को–आपरेटिव आफीसर(हाउसिंग) समिति के एडमिनिस्ट्रेटिव थे। एडमिनिस्ट्रेटिव द्वारा अपनी मीटिंग दिनांक 29.07.1989 में प्रकरण विचार में लिया गया और डिक्रीदार के पक्ष में प्लाट सं0–7 का आवन्टन निरस्त कर

दिया गया । संलग्नक सं0 4 उक्त प्रस्ताव की कापी के रूप में दाखिल किया गया है।

अग्रेतर आपत्ति में यह भी अभिकथन किया गया है कि प्रस्ताव सं0–1 दिनांक 29.07.1989 को सामान्य कार्यसमिति की मीटिंग दिनांक 17.02.1991 में अनुमोदन हेतु रखा गया, जिसमें प्रस्ताव सं0 7 के माध्यम से तथाकथित प्रस्ताव सं0 1 समिति के प्रशासक द्वारा पारित कर दिया गया , जिसमें हुई कुछ त्रुटियों को सफेदा लगाकर तत्काल दुरूस्त कर दिया गया ,जो सुधार प्रस्ताव सं0 7 में किये गये, वह आवश्यक और सदभावी थे और वही संशोधन पुनः प्रस्ताव सं0 1 में समिति के प्रशासक द्वारा अंकित किये गये। उपरोक्त संशोधन के आधार परयह नहीं कहा जा सकता कि प्रस्ताव सं0 7 का उल्लेख करने में किसी प्रकार की कूटरचना की गयी हो। संलग्न सं0–5 प्रस्ताव दिनांकित 17.02.1991 की सत्यप्रति दस्तावेजों की अलग से तैयार की गयी सूची के साथ दाखिल की गयी है। विपक्षी सं0 1 सामान्य कार्यसमिति की मीटिंग दिनांक 17.02.1991 में व्यक्तिगत तौर पर उपस्थित थे और वह आवन्टन के निरस्त होने के बारे में पूर्णतया संतुष्ट थे तथा उनके द्वारा समुचित समय में इस आवन्टन निरस्तीकरण को कोई चुनौती नहीं दी गयी। आवन्टन निरस्तीकरण के बआद प्रशासक द्वारा प्रस्ताव सं0 4 के माध्यम से यह निर्णय लिया गया कि प्लाट सं0 7 निर्णीतऋणी/आपत्तिकर्ता के पक्ष में आवन्टित कर दिया जाये और यह निर्देश दिया गया कि सारी औपचारिकतायें पूरी करने के उपरानत समिति के सचिव प्लाट सं0 7 को आपत्तिकर्ता के पक्ष में विक्रय विलेख निष्पादित करेंगे। संलग्न सं0–6 प्रस्ताव सं0 4 दिनांकित 23.06.92 की सत्यप्रति दस्तावेजों की अलग से तैयार की गयी सूची के साथ दाखिल की गयी है। विक्रय विलेख निष्पादित होने के पश्चात निर्णीत ऋणी को समिति की सदस्यता शुल्क जमा करने पर सदस्य बनाया गया। अग्रेतर यह भी कहा गया है कि विक्रय विलेख से सम्बन्धित विवाद इस अधिनियम की धारा70 की परिधि में नहीं आता है, क्योंकि यह विवाद सदस्यों के मध्य नहीं माना जायेगा। विक्रय विलेख के निष्पादन होने व पंजीकृत होने के समय अपीलकर्ता द्वारा रू024,000/–नकद अदा किये गये थे और एक चेक रू058,600/– भी दिनांक 05.11.1992 को दिया गया था। विक्रय विलेख का निष्पादन व पंजीकरण मुम्बई में कराना किसी विधि द्वारा बाधित नहीं था तथा इसे किसी भी दशा में धोखे से कराया जाना नहीं कहा जा सकता है। हाईस्कूल प्रमाण पत्र में अंकित अपीलकर्ता की

जन्मतिथि 07.06.1974 तथा दिनांक 07.07.1992 को समिति का सदस्य बनने हेतु आवेदन किये जाते समय उसकी आयु 18 वर्ष से अधिक थी और वह सदस्य बनने योग्य था। डिक्रीदार द्वारा आर्बीट्रेशन केस दिनांक 05.11.2003 प्लाट नं0–7 के बाबत अपीलार्थी के पक्ष में निष्पादित विक्रय विलेख दिनांक 28.08.1992 को अवैध घोषित किये जाने तथा अपास्त किये जाने हेतु दाखिल किया गया । दिनांक 28.08.1992 को अपीलार्थी ने अपना भवन निर्मित कराया, जहॉ वह पिछले 5 वर्ष से रह रहा है, जिसकी जानकारी विपक्षी सं0 1 को पूर्णरूपेण थी, इसके बावजूद भी विपक्षी ं0 1 ने अपीलकर्ता के मकान को गिराने हेतु किसी प्रकार का अनुतोष नहीं चाहा और बिना मकान को ध्वस्त किये किसी अन्य अनुतोष प्रदान नहीं किया जा सकता। अग्रेतर यह भी कहा गया है कि विपक्षी सं0 1 के पक्ष में प्लाट सं0–7 के सम्बन्ध में औपचारिक रूप से किया गया आवन्टन किसी भी अधिकार, स्वत्व या हित को मजबूत न हीं करता है। तदनुसार,आर्बीट्रेशन केस निरस्त होने योग्य है।

आपत्तिकर्ता के विद्वान अधिवकता द्वारा मुख्य रूप से यह तर्क प्रस्तुत किया गया है कि को–आपरेटिव सोसायटी ट्रिबुनल यू0पी0,लखनऊ को विक्रय विलेख को निरस्त किये जाने का कोई क्षेत्राधिकार प्राप्त नहीं था। क्षेत्राधिकार का प्रश्न भी इस स्तर पर उठाया जा सकता है तथा यदि आपत्तिकर्ता स्वत्व की वैधता के सम्बन्ध में विवाद उत्पन्न करता है , तो उसका भी सक्षम न्यायालय द्वारा अन्तर्गत धारा 9 सी0पी0सी0 निस्तारण किया जायेगा। यह भी तर्क प्रस्तुत किया गया कि धारा 70 को–आपरेटिव सोसायटी एक्ट के अन्तर्गत विक्रय विलेख की वैधता को चुनौती नहीं दी जा सकती, बल्कि सिविल कोर्ट में ही चुनौती दी जा सकती है। निर्णीत ऋणी द्वारा यह भी तर्क प्रस्तुत किया गया है कि पंजीकृत प्राधिकारी द्वारा पंजीकृत विक्रय विलेख को निरस्त नहीं किया जा सकता, इसके लिये न्यायालय ही सक्षम है।

डिक्रीदार के विद्वान अधिवक्ता द्वारा धारा 47 आपत्ति के विरूद्व यह तर्क प्रस्तुत किया गया कि आपत्ति–निर्णीतऋणी संधार्य नहीं है। विधि का यह सुस्थापित सिद्वान्त है कि Court can not go behind the decree प्रस्तुत प्रकरण में इसके पूर्व भी धारा 47 की आपत्ति निरस्त हो चुकी है। निर्णीत ऋणी द्वारा न्यायाधिकरण के आदेश को कहीं भी चुनौती नहीं दी गयी है, जो अंतिम हो चुका है। धारा 47 सी0पी0सी0 की आपत्ति निरस्त की जाये तथा निष्पादन वाद की काग्रवाही अमल में लायी जाये।

पक्षकारों के विद्वान अधिवक्तागण के तर्कों को सुना गया एवं पत्रावली का सम्यक् परिशीलन किया गया।आपत्तिकर्ता की ओर से निम्नलिखित दस्तावेज दाखिल किये गये–

यहाँ यह महत्वपूर्ण है कि निष्पादन वाद संख्या 285-सी/2009 में पूर्व में भी आदेश दिनांक 13.09.2019 के माध्यम से आपत्तिकर्ता द्वारा धारा 47 सी.पी.सी. के अंतर्गत प्रस्तुत आपत्ति का निस्तारण किया जा चुका है। उक्त आदेश के विरुद्ध आपत्तिकर्ता द्वारा माननीय उच्च न्यायालय के समक्ष पुनरीक्षण प्रार्थना पत्र संख्या 94/2019 प्रस्तुत किया गया, जिसमें माननीय उच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 30.11.2021 को निम्नवत् आदेश पारित किया गया है :-

<u>सिविल रिवीजन संख्या-94/2019 चन्द्र शेखर सिंह बनाम कल्पना कपूर एवं अन्य</u>

" पुनरीक्षणकर्ता की ओर से अधिवक्ता श्री रोहित त्रिपाठी तथा प्रत्यर्थी संख्या-1 की ओर से वरिष्ठ अधिवक्ता श्री गौरव मेहरोत्रा को सुना गया। प्रत्यर्थी संख्या-2 की ओर से कोई उपस्थित नहीं हुआ, यद्यपि उस पर तामील पर्याप्त है। यह सूचित किया गया कि वह केवल औपचारिक पक्षकार है।

यह पुनरीक्षण, सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 115 के अंतर्गत, विद्वान जिला न्यायाधीश, लखनऊ द्वारा विविध वाद संख्या-285-C/2009 में *निष्पादन वाद संख्या-37/2007, श्याम लाल कपूर बनाम उग्रसेन सिंह एवं अन्य, में पारित दिनांक 13.09.2019 के आदेश के विरुद्ध प्रस्तुत किया गया है। विद्वान जिला न्यायाधीश द्वारा पुनरीक्षणकर्ता की सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 47 के अंतर्गत प्रस्तुत आपत्ति निरस्त कर दी गई थी।*

संक्षेप में प्रकरण के तथ्य यह हैं कि विवाद को उत्तर प्रदेश सहकारी समितियाँ अधिनियम, 1965 की धारा *70 तथा उसके अधीन बनाए गए नियमों के अंतर्गत रजिस्ट्रार, सहकारी समितियाँ,* उ.प्र. *के समक्ष मध्यस्थता हेतु प्रस्तुत किया गया था। दिनांक 26.03.2004* को अधिनिर्णय *(Award) पारित किया गया। उक्त अधिनिर्णय के विरुद्ध वर्ष 1965 के अधिनियम के अंतर्गत अपील प्रस्तुत की गई, जिसे दिनांक 31.01.2007 को निरस्त कर दिया गया। उक्त अपीलीय आदेश को आगे चुनौती नहीं दी गई, यद्यपि श्री त्रिपाठी द्वारा सूचित किया गया कि तत्पश्चात दिनांक 18.09.2019 को रिट याचिका संख्या 25987 (*एम.एस.*)/2019 दाखिल कर उक्त आदेश को चुनौती दी गई है। पक्षकारों की सहमति से उक्त रिट याचिका को इस पुनरीक्षण से अलग कर संबंधित पीठ के समक्ष सुनवाई हेतु भेजे जाने का आदेश दिया गया।*

उत्तर प्रदेश सहकारी समितियाँ अधिनियम, 1965 की धारा 70 के अंतर्गत रजिस्ट्रार, सहकारी समितियाँ द्वारा पारित अधिनिर्णय के निष्पादन हेतु, जैसा कि अपील में भी पुष्ट किया गया था, प्रत्यर्थी संख्या-1 द्वारा सिविल न्यायालय के समक्ष निष्पादन कार्यवाही प्रारंभ की गई। उक्त कार्यवाही में पुनरीक्षणकर्ता द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 47 के अंतर्गत यह आपत्ति प्रस्तुत की गई कि रजिस्ट्रार, उ.प्र. सहकारी समितियाँ, मध्यस्थ के रूप में कार्य करते हुए दिनांक 28.08.1992 की विक्रय विलेख (Sale Deed) को निरस्त नहीं कर सकते थे, क्योंकि ऐसी शक्ति केवल सिविल न्यायालय में निहित है।

पूर्ववर्ती वाद के दौरान निष्पादन आवेदन को परिसीमा के आधार पर सिविल न्यायालय द्वारा निरस्त कर दिया गया था। इसके विरुद्ध इस न्यायालय के समक्ष सिविल रिवीजन संख्या-60/2012 प्रस्तुत किया गया, जिसे दिनांक 18.02.2014 के निर्णय द्वारा स्वीकार किया गया। उक्त पुनरीक्षण स्वीकार करते समय न्यायालय ने स्पष्ट रूप से यह टिप्पणी की थी कि इस प्रश्न पर कि क्या उत्तर प्रदेश सहकारी समितियाँ अधिनियम, 1965 के प्रावधानों के अंतर्गत मध्यस्थ को पुनरीक्षणकर्ता/चन्द्र शेखर सिंह के पक्ष में निष्पादित दिनांक 28.08.1992 की विक्रय विलेख को शून्य एवं अवैध घोषित कर निरस्त करने का अधिकार था अथवा नहीं, निष्पादन न्यायालय द्वारा गुण-दोष के आधार पर निर्णय किया जा सकता है। यही आपत्ति पुनरीक्षणकर्ता द्वारा निष्पादन वाद संख्या-37/2007 में सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 47 के अंतर्गत प्रस्तुत की गई थी।

पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का तर्क है कि पूर्व निर्णय में इस न्यायालय द्वारा निष्पादन न्यायालय को उक्त प्रश्न पर गुण-दोष के आधार पर निर्णय करने का निर्देश दिए जाने के बावजूद, निष्पादन न्यायालय ने इस मुद्दे पर विचार किए बिना मात्र यह कहते हुए आपत्ति को खारिज कर दिया कि निष्पादन न्यायालय के लिए डिक्री के पीछे जाना उचित नहीं है। उनका कहना है कि जब इस न्यायालय ने अपनी पुनरीक्षणीय शक्ति का प्रयोग करते हुए निष्पादन न्यायालय को उक्त मुद्दे पर गुण-दोष के आधार पर निर्णय करने का निर्देश दिया था, तब निष्पादन न्यायालय द्वारा इसे इस प्रकार संक्षिप्त रूप से अस्वीकार नहीं किया जा सकता था। आगे यह तर्क दिया गया कि यह प्रश्न कि मध्यस्थ को विक्रय विलेख निरस्त करने का अधिकार था अथवा नहींए एक अधिकारिता संबंधी (jurisdictional) प्रश्न है, जिस पर निष्पादन न्यायालय विचार कर सकता है और इसे केवल यह कहकर अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि ऐसा करना डिक्री के पीछे जाने के समान होगा।

प्रत्यर्थी संख्या-*1 की ओर से विद्वान अधिवक्ता श्री गौरव मेहरोत्रा ने उक्त विधिक स्थिति का विरोध करते हुए कहा कि चूँकि निष्पादन न्यायालय ने इस प्रश्न के गुण*-दोष *पर अभी विचार नहीं किया है, अतः इस स्तर पर इस न्यायालय द्वारा इस विषय पर निर्णय नहीं किया जाना चाहिए तथा इसे इस न्यायालय के पूर्व पुनरीक्षणीय निर्णय के आलोक में निष्पादन न्यायालय द्वारा विचार हेतु खुला छोड़ा जाना चाहिए।*

पक्षकारों की दलीलें सुनने तथा अभिलेख का अवलोकन करने के पश्चात, विशेष रूप से दिनांक 18.02.2014 को सिविल रिवीजन संख्या-*60/2012* में *पारित पूर्व निर्णय का अवलोकन किया गया, जो पक्षकारों के मध्य अंतिम एवं बाध्यकारी निर्णय है तथा जिसे किसी भी पक्षकार द्वारा चुनौती नहीं दी गई है। उक्त निर्णय में निष्पादन न्यायालय को स्पष्ट निर्देश दिया गया था कि अधिनियम, 1965* की धारा *70 के अंतर्गत विक्रय विलेख निरस्त करने के मध्यस्थ के अधिकार क्षेत्र के प्रश्न पर निर्णय किया जाए। चूँकि उक्त महत्वपूर्ण प्रश्न पर निष्पादन न्यायालय द्वारा गुण.दोष के आधार पर विचार नहीं किया गया, अतः इस न्यायालय की राय में सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 47 के अंतर्गत पुनरीक्षणकर्ता द्वारा प्रस्तुत आवेदन पर निष्पादन न्यायालय का निर्णय तात्विक अनियमितता (material irregularity) से ग्रस्त है तथा उसे वैध एवं विधिसम्मत रूप से पारित नहीं कहा जा सकता।*

अतः इस न्यायालय की पुनरीक्षणीय शक्ति के प्रयोग में उक्त आदेश में हस्तक्षेप किया जाना उचित है। परिणामतः आक्षेपित निर्णय एवं आदेश निरस्त किया जाता है।

निष्पादन न्यायालय अब पुनरीक्षणकर्ता द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 47 के अंतर्गत प्रस्तुत आवेदन पर उपर्युक्त कथित तथ्यों तथा इस न्यायालय द्वारा पूर्व पुनरीक्षण कार्यवाही में की गई टिप्पणियों के आलोक में नवीन सिरे से विचार एवं निर्णय करेगा।

यह निर्णय, यदि कोई लंबित रिट याचिका अपीलीय प्राधिकारी के निर्णय को चुनौती देती हुई प्रस्तुत है, तो उसमें पुनरीक्षणकर्ता के अधिकारों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना तथा प्रत्यर्थी संख्या-1 के उक्त रिट कार्यवाही की पोषणीयता आदि पर आपत्ति करने के अधिकार को प्रभावित किए बिना होगा।

निष्पादन न्यायालय उपर्युक्त मुद्दे पर 31.01.2022 तक निर्णय करेगा और उसके पश्चात, उपर्युक्त निर्देशों के अधीन रहते हुए, निष्पादन कार्यवाही को यथाशीघ्र पूर्ण करेगा।

अतः पुनरीक्षण उपर्युक्त शर्तों/निर्देशों के अनुसार स्वीकार किया जाता है।"

माननीय उच्च न्यायालय के उक्त आदेश के परिशीलन से स्पष्ट है कि इसी प्रकरण में माननीय उच्च न्यायालय द्वारा पूर्व में पुनरीक्षण संख्या 60/2012 में दिनांक 18-02-2014 को यह आदेश पारित किया गया था कि निष्पादन न्यायालय इस बात का निर्धारण करे कि क्या उत्तर प्रदेश सहकारी समिति अधिनियम, 1965 की धारा 70 के अंतर्गत आर्बिट्रेटर को विक्रय विलेख निरस्त किए जाने का अधिकार प्राप्त है।

माननीय उच्च न्यायालय के आदेश दिनांक 30-11-2021 के परिशीलन से यह भी स्पष्ट है कि माननीय उच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 18-02-2014 को दिए गए उक्त निर्देश के अनुपालन में इस बिंदु का निर्धारण पूर्व में पारित आदेश में नहीं किया गया था। ऐसी स्थिति में माननीय उच्च न्यायालय द्वारा पुनः उक्त निर्देश के आलोक में आपत्तिकर्ता द्वारा धारा 47 सी.पी.सी. के अंतर्गत प्रस्तुत आपत्ति का निस्तारण किए जाने का निर्देश प्रदान किया गया है।

अतः स्पष्ट है कि वर्तमान प्रकरण में इस न्यायालय को मुख्य रूप से इस बिंदु का निर्धारण करना है कि क्या उत्तर प्रदेश सहकारी समिति अधिनियम, 1965 की धारा 70 के अंतर्गत नियुक्त आर्बिट्रेटर को किसी विक्रय विलेख को निरस्त करने अथवा उसे शून्य घोषित करने का अधिकार प्राप्त है ?

इस संबंध में आपत्तिकर्ता की ओर से तर्क प्रस्तुत किया गया है कि उत्तर प्रदेश सहकारी समिति अधिनियम, 1965 की धारा 70 के अंतर्गत आर्बिट्रेटर को किसी विक्रय विलेख को निरस्त करने का क्षेत्राधिकार प्राप्त नहीं है। आर्बिट्रेटर द्वारा अपने क्षेत्राधिकार की सीमा से बाहर जाकर आदेश पारित किया गया है। अतः आर्बिट्रेटर द्वारा पारित अवॉर्ड दिनांक 26-03-2004 क्षेत्राधिकार-विहीन एवं शून्य है। उनका यह भी तर्क है कि सिविल न्यायालय ऐसी किसी डिक्री अथवा अवॉर्ड का निष्पादन नहीं करा सकता, जो ऐसे प्राधिकारी द्वारा पारित किया गया हो, जिसे विषय-वस्तु के संबंध में उक्त डिक्री अथवा अवॉर्ड पारित करने का मूल क्षेत्राधिकार ही प्राप्त न था। अतः आर्बिट्रेटर द्वारा पारित अवॉर्ड दिनांक 26-03-2004 निष्पादन योग्य नहीं है तथा उसके आधार पर निष्पादन की कार्यवाही किया जाना विधि-सम्मत नहीं होगा।

इसके विपरीत, डिक्रीधारक की ओर से उक्त तर्क का विरोध करते हुए कहा गया है कि उत्तर प्रदेश सहकारी समिति अधिनियम, 1965 की धारा 70 के अंतर्गत समिति के व्यवसाय से संबंधित विवादों के निस्तारण का क्षेत्राधिकार आर्बिट्रेटर में निहित है। वर्तमान प्रकरण में विक्रेता द्वारा अपने पुत्र के हक में विक्रय विलेख दिनांक 28-08-1992 निष्पादित किया गया था। चूँकि उक्त विक्रय विलेख समिति के व्यवसाय एवं उसके क्रिया कलापों के संदर्भ में निष्पादित किया गया था, अतः उससे

उत्पन्न विवाद उत्तर प्रदेश सहकारी समिति अधिनियम, 1965 की धारा 70 के अंतर्गत आने वाला विवाद था और आर्बिट्रेटर को उसके संबंध में निर्णय करने का क्षेत्राधिकार प्राप्त था।

डिक्रीधारक की ओर से यह भी तर्क प्रस्तुत किया गया है कि आर्बिट्रेटर द्वारा पत्रावली पर उपलब्ध समस्त तथ्यों एवं साक्ष्यों का विस्तृत परीक्षण करने के उपरांत अवॉर्ड दिनांक 26-03-2004 पारित किया गया है। अतः उक्त अवॉर्ड को क्षेत्राधिकार-विहीन नहीं कहा जा सकता। उनके अनुसार, आर्बिट्रेटर द्वारा की गई कार्यवाही उसके विधि द्वारा प्रदत्त क्षेत्राधिकार के अंतर्गत थी तथा आपत्तिकर्ता द्वारा उठाई गई आपत्तियाँ निराधार एवं बलहीन हैं। अतः उन्हें निरस्त करते हुए उक्त अवॉर्ड के आधार पर निष्पादनवाद में निष्पादन की कार्यवाही किया जाना समुचित एवं विधि. सम्मत होगा।

पत्रावली के परिशीलन से यह स्पष्ट होता है कि सर्वप्रथम प्रतिवादी संख्या-2, अमरावती सहकारी गृह निर्माण समिति द्वारा वादी के पक्ष में एक भूखंड का आवंटन किया गया था। उक्त आवंटन को बाद में निरस्त कर दिया गया। इसके उपरांत प्रतिवादी संख्या-1, जो उक्त सहकारी समिति के सचिव थे, द्वारा उसी भूखंड के संबंध में प्रतिवादी संख्या-3, जो प्रतिवादी संख्या-1 का पुत्र था, के पक्ष में दिनांक 28-08-1992 को विक्रय विलेख निष्पादित कर दिया गया।

उक्त परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में विवाद आर्बिट्रेटर के समक्ष प्रस्तुत हुआ। आर्बिट्रेटर द्वारा दोनों पक्षों को सुनने के उपरांत अवॉर्ड दिनांक 26-03-2004 पारित किया गया। उक्त अवॉर्ड के माध्यम से आर्बिट्रेटर द्वारा प्रतिवादी संख्या-1 द्वारा प्रतिवादी संख्या-3 के पक्ष में निष्पादित विक्रय विलेख दिनांक 28-08-1992 को अवैध एवं विधिशून्य घोषित कर दिया गया तथा उक्त भूखंड के संबंध में वादी के पक्ष में रजिस्ट्री किए जाने हेतु प्रतिवादी संख्या-2, अमरावती सहकारी गृह निर्माण समिति को निर्देशित किया गया।

अतः वर्तमान प्रकरण में मूल प्रश्न यह है कि क्या उत्तर प्रदेश सहकारी समिति अधिनियम, 1965 की धारा 70 के अंतर्गत नियुक्त आर्बिट्रेटर को पूर्व में निष्पादित एवं पंजीकृत विक्रय विलेख को अवैध अथवा विधिशून्य घोषित करने तथा उसके प्रभाव को समाप्त करने का अधिकार प्राप्त था?

इस स्तर पर यह भी विचारणीय है कि यदि किसी न्यायालय अथवा प्राधिकारी द्वारा ऐसी डिक्री अथवा आदेश पारित किया गया हो, जिसे पारित करने का उसे

विषय-वस्तु के संबंध में अंतर्निहित क्षेत्राधिकार ही प्राप्त न हो, तो क्या ऐसी डिक्री अथवा आदेश का निष्पादन कराया जा सकता है।

माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा किरन सिंह व अन्य बनाम चमन पासवान व अन्य, ए0आई0आर0 1954 एस0सी0 340 में प्रतिपादित सिद्धांत के अनुसार, जहाँ डिक्री पारित करने वाले न्यायालय को विषय-वस्तु पर अंतर्निहित क्षेत्राधिकार प्राप्त नहीं था, वहाँ ऐसी डिक्री शून्य होती है और उसकी शून्यता निष्पादन की अवस्था में भी उठाई जा सकती है।

इसी सिद्धांत को माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सुन्दर दास बनाम राम प्रकाश (1977) 2 एस0सी0सी0 662 में पुनः प्रतिपादित किया गया है कि यदि डिक्री पारित करने वाले न्यायालय में विषय-वस्तु पर अंतर्निहित क्षेत्राधिकार का अभाव था और परिणामतः डिक्री शून्य है, तो निष्पादन न्यायालय ऐसी डिक्री के निष्पादन से इनकार कर सकता है।

माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा वासुदेव धनजीबाई मोदी बनाम राजाभाई अब्दुल रहमान (1970) 1 एस0सी0सी0 670 में भी यह सिद्धांत स्पष्ट किया गया है कि सामान्यतः निष्पादन न्यायालय डिक्री के पीछे नहीं जा सकता, किंतु जहाँ डिक्री पारित करने वाले न्यायालय को ऐसी डिक्री पारित करने का अंतर्निहित क्षेत्राधिकार ही प्राप्त नहीं था, वहाँ उसकी वैधता का प्रश्न निष्पादन की कार्यवाही में उठाया जा सकता है।

अब इस विधिक स्थिति को वर्तमान प्रकरण के तथ्यों पर लागू किया जाना है। इस संबंध में माननीय इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा रिट –सी नं0–44298/2025,हरिपुरम सहकारी आवास लि0 व अन्य बनाम उ0प्र0 राज्य व अन्य,2026 ए एच सी 13536–डी बी, निर्णय दिनांक 20-01-2026 में उत्तर प्रदेश सहकारी समिति अधिनियम, 1965 की धारा 70 के अंतर्गत आर्बिट्रेटर की अधिकारिता के प्रश्न पर विचार किया गया है। उक्त निर्णय में धारा 70(1)(b) के दायरे का परीक्षण करते हुए यह विचार किया गया कि क्या सहकारी समिति द्वारा निष्पादित विक्रय विलेख को null and void घोषित करने की कार्यवाही उक्त धारा के अंतर्गत संदर्भित विवाद का विषय हो सकती है।

माननीय उच्च न्यायालय ने उक्त निर्णय में दिल्ली दयालबाग कापरेटिव हाउसिंग बिल्डिंग सोसायटी लि0 बनाम रजिस्ट्रार, कापरेटिव सोसायटी,में प्रतिपादित सिद्धांत का उल्लेख करते हुए स्पष्ट किया कि पंजीकृत विक्रय विलेख की

वैधता का परीक्षण धारा 70 के अंतर्गत आर्बिट्रेटर/रजिस्ट्रार के क्षेत्राधिकार में नहीं आता और उससे व्यथित व्यक्ति का उपचार सक्षम सिविल न्यायालय के समक्ष है।

यद्यपि हरिपुरम सहकारी आवास समिति के मामले में तथ्यात्मक स्थिति दिल्ली दयालबाग के मामले से भिन्न थी, तथापि माननीय उच्च न्यायालय ने यह स्पष्ट किया कि आर्बिट्रेटर/रजिस्ट्रार इस प्रश्न पर विचार कर सकता है कि सहकारी समिति को संबंधित भूमि हस्तांतरित करने का अधिकार प्राप्त था अथवा नहीं। किंतु यदि पंजीकृत विक्रय विलेखों की delivery up and cancellation अपेक्षित हो, तो उसके लिए संबंधित पक्ष सक्षम सिविल न्यायालय के समक्ष जा सकता है।

उपर्युक्त विधिक स्थिति के आलोक में यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि हरिपुरम सहकारी आवास समिति लिमिटेड में प्रतिपादित सिद्धांत के अनुसार अधिकतम यह माना जा सकता है कि उत्तर प्रदेश सहकारी समिति अधिनियम, 1965 की धारा 70 के अंतर्गत आर्बिट्रेटर/रजिस्ट्रार इस बात का निर्धारण कर सकता है कि संबंधित भूमि को हस्तांतरित अथवा विक्रय करने का अधिकार सहकारी समिति को प्राप्त था अथवा नहीं। किंतु किसी पूर्व में निष्पादित एवं पंजीकृत विक्रय विलेख को स्वयं निरस्त अथवा विधिशून्य घोषित करना और उसके विधिक प्रभाव को समाप्त करना धारा 70 के अंतर्गत आर्बिट्रेटर की अधिकारिता में नहीं आता। पंजीकृत विक्रय विलेख के निरस्तीकरण के लिए सक्षम सिविल न्यायालय का क्षेत्राधिकार उपलब्ध है।

वर्तमान प्रकरण में आर्बिट्रेटर ने अवॉर्ड दिनांक 26-03-2004 के माध्यम से प्रतिवादी संख्या-1 द्वारा प्रतिवादी संख्या-3 के पक्ष में निष्पादित पंजीकृत विक्रय विलेख दिनांक 28-08-1992 को न केवल अवैध घोषित किया, बल्कि उसे विधिशून्य घोषित करते हुए उसके विधिक प्रभाव को समाप्त कर दिया तथा उसी भूखंड के संबंध में वादी के पक्ष में रजिस्ट्री किए जाने हेतु प्रतिवादी संख्या-2 को निर्देशित किया। इस प्रकार आर्बिट्रेटर की कार्यवाही केवल इस निर्धारण तक सीमित नहीं रही कि सहकारी समिति को उक्त भूमि के हस्तांतरण का अधिकार था अथवा नहीं, बल्कि उसने उससे आगे बढ़कर पंजीकृत विक्रय विलेख को ही विधिशून्य घोषित कर दिया।

फलतः इस न्यायालय का निष्कर्ष है कि अवॉर्ड दिनांक 26-03-2004 पारित करते समय आर्बिट्रेटर ने अपने विषय.वस्तुगत क्षेत्राधिकार की सीमा का अतिक्रमण किया। उसे उत्तर प्रदेश सहकारी समिति अधिनियम, 1965 की धारा 70 के अंतर्गत पंजीकृत विक्रय विलेख दिनांक 28-08-1992 को निरस्त अथवा विधिशून्य घोषित करने का वैधानिक अधिकार प्राप्त नहीं था।

चूँकि आर्बिट्रेटर को उक्त विषय-वस्तु के संबंध में मूल क्षेत्राधिकार प्राप्त नहीं था, अतः उसके द्वारा उक्त सीमा तक पारित अवॉर्ड विधि की दृष्टि में क्षेत्राधिकार. विहीन एवं शून्य है। ऐसी स्थिति में किरन सिंह,वासुदेव धनजीबाई मोदी तथा सुन्दर दास में प्रतिपादित सिद्धांत लागू होते हैं और ऐसा अवॉर्ड निष्पादन योग्य नहीं है। निष्पादन न्यायालय ऐसे क्षेत्राधिकार-विहीन अवॉर्ड को केवल इस आधार पर निष्पादित नहीं करा सकता कि वह औपचारिक रूप से अवॉर्ड के रूप में विद्यमान है।

अतः आपत्तिकर्ता द्वारा धारा 47 सी.पी.सी. के अंतर्गत प्रस्तुत आपत्ति स्वीकार की जाती है। अवॉर्ड दिनांक 26-03-2004, जिस सीमा तक पंजीकृत विक्रय विलेख दिनांक 28-08-1992 को अवैध एवं विधिशून्य घोषित करता है, क्षेत्राधिकार-विहीन एवं निष्पादन योग्य न होने के कारण उसके आधार पर प्रस्तुत निष्पादन कार्यवाही स्वीकार्य नहीं है। फलतः आपत्तिकर्ता की आपत्ति स्वीकार करते हुए निष्पादन वाद की कार्यवाही समाप्त की जाती है।

आदेशानुसार पत्रावली दाखिल दफ्तर हो।

दिनांक–12–08–2026

(प्रशांत बिलगैयाँ)
अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश,
कोर्ट सं०–18, लखनऊ।